साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 2, अंक 37, मई(द्वितीय), 2018

विभाजन के बाद सिन्धी हिंदी व् अन्य भाषाओँ के साहित्य में संघर्ष

देवी नागरानी

आज की परिचर्चा का विषय है भारतीय साहित्य में स्त्री का जीवन संघर्ष/ कविता में स्त्री स्वर/ और साथ में एक नोट भी जुड़ा हुआ कि यह प्रपत्र किसी भी भाषा में हो सकता है-उदहारण कन्नड़, संस्कृत, अंग्रेजी, मराठी, उर्दू, कोंकणी, गुजराती, तेलुगु, मलयालम, तमिल आदि....! मैं सिंधी भाषी हूँ पर मेरी मात्र भाषा सिन्धी का कहीं नमो निशाँ नहीं. तब मैंने यह तय किया कि मैं विभाजन के बाद सिन्धी साहित्य में लेखिकाओं के काव्य का स्वरुप सामने ले आऊँगी.

एक बात जो सूरज की रौशनी के सामान सामने आ रही है वह यह है- प्रांतीय परीधियों के बांध तोड़ता है अनुवाद...! दोस्ती का पैगंबर है अनुवाद...! आज की मांग अनुवाद है- विवाद नहीं! भाषा की विविधता के बावजूद भी मानव मन की भावनाएँ वही है, दुख-सुख वही है धूप छाँव की तरह, समस्याएँ-समाधान भी वही है, संघर्ष भी वही...!

'साहित्य में कविता की सिन्फ़ में स्त्री स्वर, मतलब नारी मन की सोच शब्दों में अभिव्यक्ति करने की क्रिया. यह भी एक संघर्ष है.

इसी दिशा में मैंने विभाजन के बाद उखड़ने और बस जाने की प्रताड़ना को अनुवाद के माध्यम से कहानियों और कविअताओं में दरपेश किया है.कविवर बच्चन जी, जो स्वयं एक कुशल अनुवादक रहे, उनका कहना कि - "अनुवाद दो भाषाओं

के बीच मैत्री का पुल है। अनुवाद एक भाषा का दूसरी भाषा की ओर बढ़ाया गया मैत्री का हाथ है। वह जितनी बार और जितनी दिशाओं में बढ़ाया जा सके, बढ़ाया जाना चाहिए।"

मेरी जन्म भूमि सिंध, कराची की एक बागी शायारा अतिया दाऊद का यह काव्य संग्रह 'एक थका हुआ सच' मैंने उनकी अनुमति से हिंदी में अनुवाद किया है, ताकि यह भाषा और भाव से परे की अभिव्यक्ति पाठकों तक पहुंचे.

साहित्य न तो कोई शस्त्र है, न कोई क्रांति करने-कराने का ज़रिया है। वह फ़क़त इल्म की रोशनी में इंसान को स्वतंत्र ढंग से जीने की, आगे बढ़ने की, समस्याओं को समझने की, उनके समाधान पाने की, उनसे जूझने की शक्ति प्रदान करता हुआ उजाला है. आज के बदलते युग में नारी को अपनी जात का मान सम्मान, उसका अपना सम्मान लगता है और उसका अनादर स्वयं का अनादर है। वह कोई अस्तित्वहीन वस्तु नहीं जिसके साथ अव्यवहार करके उसके अस्तित्व को नकारा जाए।

सिंधी समाज के बीच रहते हुए, पुरुष सत्ता के अधीन नारी की परिवर्तनशील अवस्थाओं के संदर्भ में सिंध की बागी शायरा अतिया दाऊद ने भी अपनी जात के हक़ में अनेक कवितायें लिखी हैं...चौंकने वाली, डंक मारती हुई. तेजाबी तेवरों में लिखी उनकी कवितायें कवितायें नहीं, औरत की रूदाद है, जो शब्दों में ढल गयी है. पढ़ते ही मन में हलचल सी मच जाती है. तेजाबी तेवरों में एक बेहतर जिन्दगी जीने का हक़ पाने की संभावनाओं को स्पष्टता प्रदान करती अतिया दाऊद की ये पंक्तियाँ डंके की चोट पर कह रही है ---

तुम इंसान के रूप में मर्द

मैं इन्सान के रूप में औरत

लफ़्ज़ एक है-

मगर माइने तुमने कितने दे डाले

मेरे जिस्म की अलग पहचान के जुर्म में -10

औरत और मर्द दोनों संसार की उत्पति के प्रधान पहिये है, जो नवनिर्माण के अहम कारण हैं। शक्ति, बुद्धि, विवेक जितना पुरुष को प्राप्त है उतना ही स्त्री को। बावजूद इसके भारतीय समाज में पुरुष प्रधानता के कारण नारी अपने कांधों पर उठाई जिम्मेदारियों के बोझ तले दबी सी रह जाती है। पिता, भाई और पति की सत्ता के तहत, उनके तबके व दबाव में वह फ़क़त घर की दहलीज़ की खामोश सांकल से बंधी रह जाती है. लम्बे अरसे से हो रहे दमन और शोषण के कारण नारी चेतना जागृत होकर नारी विमर्शों को जन्म देने में कामयाब हुई है. पुरुष सत्ता को अस्वीकार करते हुए अत्तिया जी के काव्य में नारी स्वर की गूँज कहती है-

शोकेस में पड़ा खिलौना

मुझे गोश्त की थाली समझ कर / चील की तरह झपट पड़ते हो

उसे मैं प्यार समझूँ ? / इतनी भोली तो मैं नहीं
मुझसे तुम्हारा मोह ऐसा है/ जैसा बिल्ली का छिछड़े से
उसे मैं प्यार समझूँ ?/ इतनी भोली तो मैं नहीं ---"(मांस का लोथड़ा..12)
नारी के घायल मन से निकली आह, सिर्फ़ शब्दावली नहीं है, हर औरत की रूदाद है. अमर गीत नामक कविता का यह अंश सच को सामने रखते हुए कहता है...

जिस धरती की सौगंध खाकर/ तुमने प्यार निभाने के वादे किये थे

उस धरती को हमारे लिये क़ब्र बनाया गया है /

देश के सारे फूल तोड़कर / बारूद बोया गया है

यह है औरत की अपने हिस्से की लड़ाई, खुद से, आदमी से, समाज से, जो वह लड़ती आ रही है -कारण एक है-समाज में मान सम्मान और एक से अधिकार पाना, यही उसकी मांग है। यही नारी मुक्ति का उद्देश्य है. वह जानती है कि वह पुरुष की सहधर्मिणी है, पर आज सीता को आदर्श मानकर वह गर्दन झुकाकर 'हाँ' कहने को तैयार नहीं।

आज की नौजवान पीढ़ी अपनी कविताओं में अपने मज़बूत इरादों को, सोच-विचार को, बिना किसी डर, बिना झिझक सामने ले आती है। 'निर्भया' आज भी हमारे दिलों में ज्वालामुखी बनकर धधक रही है जिसके लिए सिंधी कवियित्री शालिनी सागर ने लिखा है:

निर्भया के सपनों का महल, / मर्द ने चूर चूर कर दिया..... /
फ़क़त अपनी वासना की पूर्ति की ख़ातिर ....!

अभिव्यक्ति, मर्द की करतूत की ओर निशाना साधकर, साफगोई से डंके की चोट पर ऐलान कर रही है। यह भी एक संघर्ष है जो आज भी नारी समाज में अपनी सुरक्षा के लिए करती आ रही है। पूना निवासी सिन्धी लेखिका इन्दिरा शबनम ने भी अपने मन की वेदना को प्रभावशाली तर्क देते हुए वही भाव प्रकट किया है---

"चार पाँच मर्दों की वहशियत का शिकार बनी
वह बेगुनाह, मासूम बच्ची, जिन्हें
काका, दादा, भाऊ, मामा कहकर पुकारती थी...."

उसी रेशमी तार से बुना हुआ वरिष्ठ कहानीकार माया राही की कविता का यह अंश मर्द के सत्ता एवं पाखंडी वृति को दर्शा रहा है -

नौकरी की तलाश में/ बड़ी आफिसों के
छोटे कर्मचारियों के आगे पीछे / कठपुतली की तरह/ बेरहमी से धक्के खाते हुए/
शरीर भी घिसे-पिटे चप्पल सामान फट सा गया है.

यह दुर्दशा है नारी की इस समाज में. नारी तब तक अपने अपने हिस्से का बनवास भोगती रहेगी? विभाजन उपरांत पंजाब की प्रख्यात कवित्री, कहानीकार व उपन्यासकार अमृता प्रीतम ने नारी की प्रताड़ना को, ज़िल्लत भरे माहौल में पनपते देखा. उनकी कलम ने नारी के ज़हन की त्रासदी को पहचानाते हुए उनके मनोभावों को जुबान दी. अमृता प्रीतम के इस काव्य में यही भाव खौल रहा है --

"मिट्टी के इस चूल्हे में / इश्क की आंच बोल उठेगी

मेरे जिस्म की हँडिया में/ दिल का पानी खौल उठेगा!"

उसी खुलते उबाल में मेरी कविता का अंश अपनी रूदाद कह जाता है:

गुरबत का सूद

नहीं चुका पाऊंगी मैं

उस बनिए के बिल को

गिरवी जिसके पास रखी है

मेरी गुरबत,

यही तो मेरी पूंजी है

जो निरंतर बढ़ती जा रही है
कर्ज़ के रूप में
जिसे खाती जा रही है
जिसे निगलती जा रही है
मेरी इच्छाओं की भूख!!
और साथ उसके
बढ़ रहा है सूद भी

हाँ सूद ! उन पैसों पर

जो मैंने कभी लिए ही न थे!

हाँपेट की खातिर ले आई थी !

दो मुट्ठी आटा, चार दाने चावल

कभी दाल तो कभी साबू दाने,

उबाल कर अपने ही गुस्से के जल में

पी जाती हूँ ।

पिछले कई सालों से

हाँ गुज़रे कई सालों से लगातार

झुकते झुकते

मेरी गुरबत की कमर

अब दोहरी हो गई है

न कभी सीधी हुई, न होगी

अमीरों के आगे

कर्ज़दार थी, और सदा रहूँगी !

और अब अंत नहीं, एक नए आगाज़ के इस खौलते उबाल को हवा देते, श्री धर्मवीर भारती जी की कविता की ये पंक्तियां समर्थन करते हुए---

"क्या हुआ दुनिया अगर मरघट बनी

अभी मेरी आख़िरी आवाज़ बाक़ी है

हो चुकी हैवानियत की इंतेहा/ आदमीयात का अभी आगाज़ बाकी है

लो मैं तुम्हें फिर नया विश्वास देती हूँ / नया इतिहास देती हूँ

कौन कहता है कि कविता मर गई !"

अब मेरे विचारों की उथल पुथल कह रही है-कहीं कविता नारी तो नहीं”

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें